एयक्खेत्तोगाढं, सव्वपदेसेहिं कम्मणो जोग्गं ।
बंधदि सगहेदूहिं य, अणादियं सादियं उभयं ॥ 185 ॥

≈अर्थ— जघन्य अवगाहनारूप एकक्षेत्र में स्थित और कर्मरूप परिणमने के योग्य अनादि अथवा सादि अथवा दोनों स्वरूप जो पुद्गलद्रव्य है उसको यह जीव अपने सब प्रदेशों से मिथ्यात्वादिक के निमित्त से बांधता है ॥ 185 ॥

प्रदेश बंध

कर्मरूप पुद्गलों का आत्मप्रदेशों के साथ संश्लेष संबंध होना प्रदेशबंध कहलाता है ।

कौन	जीव
किसके द्वारा	अपने सर्व प्रदेशों के द्वारा
कहाँ स्थित	एकक्षेत्र में स्थित
किस वर्गणा को	कर्मरूप होने के योग्य (कार्मण वर्गणा)
कैसा पुद्गल द्रव्य	सादि, अनादि, अथवा उभयरूप पुद्गल द्रव्य को
किस निमित्त से	मिथ्यात्व आदि के निमित्त से
क्या करता है	बांधता है।

एयसरीरोगाहिय-मेयक्खेत्तं अणेयखेत्तं तु ।
अवसेसलोयखेत्तं, खेत्तणुसारिट्ठियं रूवी ॥ 186 ॥

≈अर्थ— एक शरीर से रुकी हुई जगह को एकक्षेत्र कहते हैं और बाकी सब लोक के क्षेत्र को अनेक-क्षेत्र कहते हैं ।

≈अपने-अपने क्षेत्र के अनुसार ठहरे हुए पुद्गलद्रव्य का प्रमाण त्रैराशिक से समझ लेना चाहिए ॥ 186 ॥

एकक्षेत्र, अनेक-क्षेत्र

नाम	एकक्षेत्र	अनेक-क्षेत्र
परिभाषा	एक जीव के शरीर की अवगाहनारूप क्षेत्र को एक-क्षेत्र कहते हैं ।	एकक्षेत्र को छोड़कर लोक का शेष सर्व क्षेत्र अनेक-क्षेत्र कहलाता है ।
क्षेत्र का प्रमाण	$\frac{\text{घनांगुल}}{\text{असंख्यात}}$ प्रमाण	लोक का असंख्यात बहुभाग अथवा लोक से कुछ कम ।

यद्यपि एक जीव की अवगाहना संख्यात घनांगुल भी होती है, तथापि बहुत जीवों की अवगाहना $\frac{\text{घनांगुल}}{\text{असंख्यात}}$ है, इसलिए एकक्षेत्र का प्रमाण इतना ही ग्रहण किया है ।

एक-अनेक-क्षेत्र में स्थित पुद्गल द्रव्य

सर्व लोक में अनंत पुद्गल द्रव्य हैं,
तो एकक्षेत्र में कितने पुद्गल हैं ?

$$\frac{१६ \text{ ख}}{\equiv} \times \frac{\text{घनांगुल}}{\text{असंख्यात}} = \frac{१६ \text{ ख}}{\text{असंख्यात}}$$

अर्थात् सर्व पुद्गलों का असंख्यातवाँ भाग एकक्षेत्र में है और असंख्यात बहुभाग अनेक-क्षेत्र में है ।

सर्व पुद्गलों का असंख्यातवाँ भाग भी अनंत पुद्गल द्रव्यरूप है ।

$$\frac{१६ \text{ ख}}{\text{असंख्यात}} = \text{अनंत}$$

एकक्षेत्र, अनेक-क्षेत्र स्थित पुद्गल द्रव्य

सर्व लोक में स्थित पुद्गल द्रव्य

जहाँ 1 जीव है वह एकक्षेत्र स्थित पुद्गल द्रव्य

शेष सर्व स्थान स्थित पुद्गल – अनेक-क्षेत्र स्थित पुद्गल द्रव्य

एयाणेयक्खेत्तट्ठियरूवि अणंतिमं हवे जोग्गं ।
अवसेसं तु अजोग्गं, सादि अणादी हवे तत्थ ॥ 187 ॥

≈अर्थ— एक तथा अनेक क्षेत्रों में ठहरा हुआ जो पुद्गलद्रव्य उसके अनंतवें भाग पुद्गल परमाणुओं का समूह कर्मरूप होने योग्य है और बाकी अनंत बहुभाग प्रमाण द्रव्य कर्मरूप होने के अयोग्य है ।

≈इस प्रकार एकक्षेत्रस्थित योग्य, एकक्षेत्रस्थित अयोग्य, अनेक क्षेत्रस्थित योग्य, अनेक क्षेत्रस्थित अयोग्य – ये चार भेद हुए । इन चारों में भी एक-एक के सादि तथा अनादि भेद जानना ॥ 187 ॥

योग्य पुद्गल द्रव्य

- जो कर्मरूप परिणमने योग्य है अर्थात् कार्मण वर्गणा

अयोग्य पुद्गल द्रव्य

- जो कर्मरूप होने अयोग्य है अर्थात् कार्मण वर्गणा को छोड़कर अन्य प्रकार की वर्गणाएँ

योग्य-अयोग्य द्रव्य का प्रमाण

एकक्षेत्र स्थित द्रव्य		अनेक-क्षेत्र स्थित द्रव्य	
योग्य	अयोग्य	योग्य	अयोग्य
अनंतवाँ भाग	अनंत बहुभाग	अनंतवाँ भाग	बहुभाग

सादि द्रव्य

- जो अतीत काल में जीव के द्वारा ग्रहण किया गया है ।

अनादि द्रव्य

- जो अनादि से कभी भी जीव के द्वारा ग्रहण नहीं किया गया ।

जेट्ठे समयपबद्धे, अतीदकाले हदेण सव्वेण ।
जीवेण हदे सव्वं, सादी होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥ 188 ॥

≈अर्थ— उत्कृष्ट योगों के परिणमन से उपार्जन (पैदा) किया जो उत्कृष्ट समयप्रबद्ध प्रमाण उसको अतीत काल के समयों से गुणा करें । फिर जो प्रमाण आवे उसे सब जीवराशि से गुणा करने पर सब जीवों के सादि द्रव्य का प्रमाण होता है ॥ 188 ॥

कुल सादि द्रव्य का प्रमाण

उत्कृष्ट समयप्रबद्ध = समयप्रबद्ध × असंख्यात

उत्कृष्ट समयप्रबद्ध ग्रहण करने के लिए असंख्यात से गुणा किया ।

एक समय में 1 जीव द्वारा ग्रहण द्रव्य = समयप्रबद्ध × असंख्यात

सर्व अतीत काल में एक जीव द्वारा ग्रहण द्रव्य = समयप्रबद्ध × असंख्यात × अतीत काल

सर्व जीवों द्वारा ग्रहण द्रव्य = समयप्रबद्ध × असंख्यात × अतीत काल × १६

यह सर्व पुद्गलों का अनंतवाँ भाग है ।

कुल अनादि द्रव्य का प्रमाण

अनादि द्रव्य = सर्व पुद्गल द्रव्य – सादि द्रव्य

१६ ख – (समयप्रबद्ध × असंख्यात × अतीत काल × १६)

यह सर्व पुद्गलों का अनंत बहुभाग है ।

याने सर्वत्र सादि द्रव्य निकालने हेतु अपने-अपने द्रव्य में अनंत का भाग लगाना । एक भाग सादि द्रव्य, शेष बहुभाग अनादि द्रव्य होता है ।

सगसगखेत्तगयस्स य, अणतिमं जोग्गदव्वगयसादी ।
सेसं अजोग्गसंगय-सादी होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥ 189 ॥

≈अर्थ— अपने-अपने एक तथा अनेक-क्षेत्र में रहने वाले पुद्गल द्रव्य के अनंतवें भाग योग्य सादि द्रव्य है और

≈इससे बाकी अनंत बहुभाग अयोग्य सादि द्रव्य है – ऐसा जिनेन्द्रदेव ने कहा है ॥ 189 ॥

एकक्षेत्र स्थित द्रव्य $\left(\frac{\text{१६ ख}}{\text{असंख्यात}}\right)$

- योग्य $\left(\frac{\text{१६ ख}}{\partial\ \text{ख}}\right)$
  - सादि — $\frac{\text{१६ ख}}{\partial\ \text{ख ख}}$
  - अनादि — $\frac{\text{१६ ख} \times (\text{ख} - 1)}{\partial\ \text{ख ख}}$
- अयोग्य $\left(\frac{\text{१६ ख} \times (\text{ख} - 1)}{\partial\ \text{ख}}\right)$
  - सादि — अनंतवां एक भाग
  - अनादि — अनंत बहुभाग

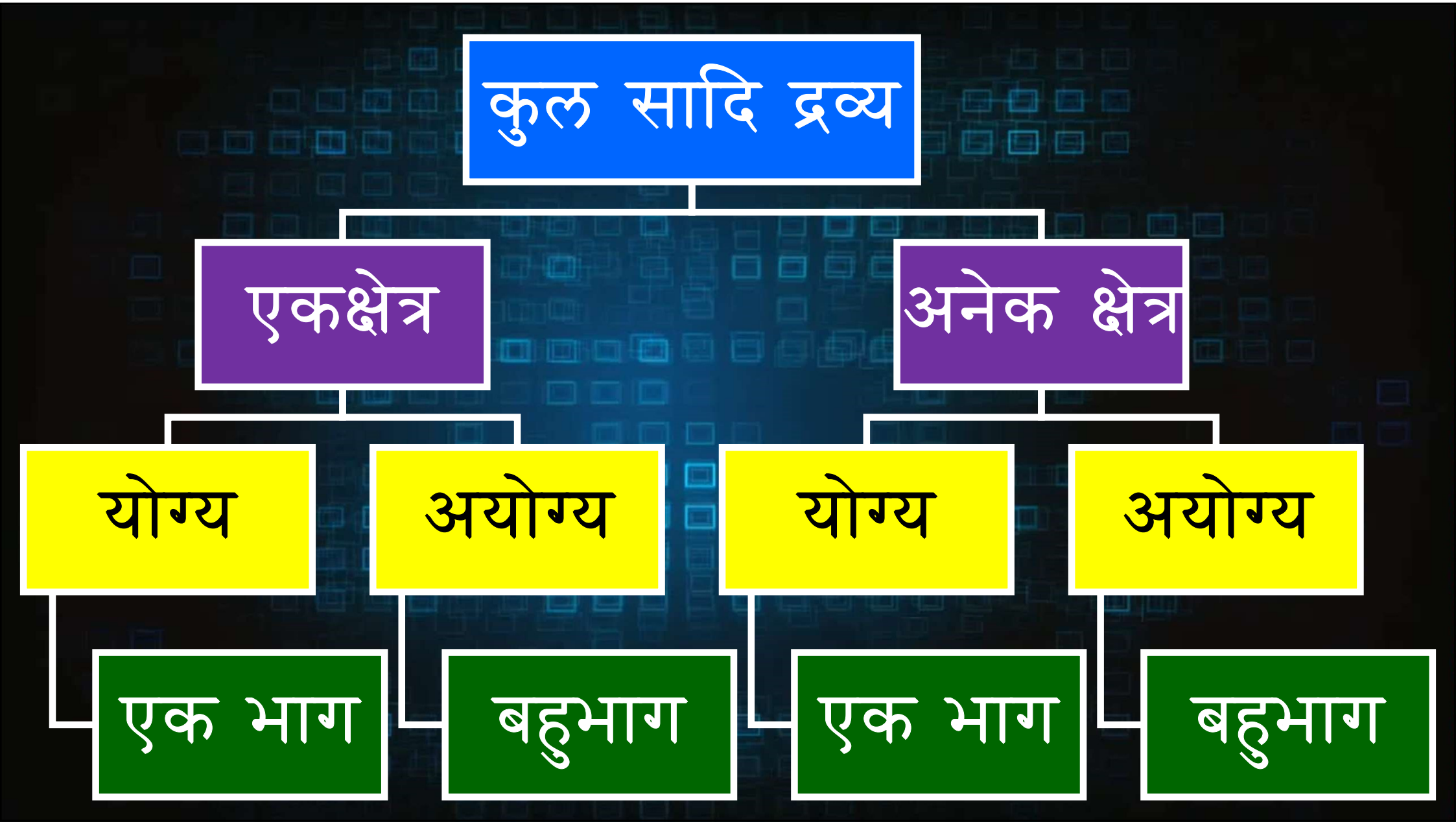
कुल सादि द्रव्य
एकक्षेत्र
अनेक क्षेत्र
योग्य
अयोग्य
योग्य
अयोग्य
एक भाग
बहुभाग
एक भाग
बहुभाग

सगसगसादिविहीणे, जोग्गाजोग्गे य होदि णियमेण ।
जोग्गाजोग्गाणं पुण, अणादिदव्वाण परिमाणं ॥ 190 ॥

≈अर्थ— एकक्षेत्र में स्थित योग्य-अयोग्य द्रव्य तथा अनेक-क्षेत्र में मौजूद योग्य वा अयोग्य द्रव्य का जो परिमाण है उसमें अपना-अपना सादि द्रव्य का प्रमाण घटाने से जो बचे वह क्रम से एकक्षेत्रस्थित योग्य अनादि द्रव्य का, एकक्षेत्रस्थित अयोग्य अनादि द्रव्य का, अनेक क्षेत्रस्थित योग्य अनादि द्रव्य का, अनेक क्षेत्रस्थित अयोग्य अनादि द्रव्य का परिमाण जानना ॥

उदाहरण — माना कि कुल पुद्गल द्रव्य = 64000 । लोक के प्रदेश = 64 । एकक्षेत्र = 4 प्रदेश ।

पुद्गल द्रव्य (64000)

एकक्षेत्र (64000/64 × 4) = 4000		अनेक-क्षेत्र (60000)	
योग्य 1000	अयोग्य 3000	योग्य (15000)	अयोग्य (45000)
सादि (200)	अनादि (800)	सादि (600)	अनादि (2400)
सादि (3000)	अनादि (12000)	सादि (9000)	अनादि (36000)

सर्व सादि द्रव्य = 200 + 600 + 3000 + 9000 = 12800
शेष अनादि द्रव्य = 64000 — 12800 = 51200

सयलरसरूवगंधेहिं, परिणदं चरमचदुहिं फासेहिं ।
सिद्धादो अभव्वादोऽणंतिमभागं गुणं दव्वं ॥ 191 ॥

≈अर्थ— वह समयप्रबद्ध पाँच प्रकार रस, पाँच प्रकार वर्ण, दो प्रकार गंध तथा शीतादि चार अंत के स्पर्श; इन गुणों से सहित परिणमता हुआ,

≈सिद्धराशि के अनंतवें भाग अथवा अभव्य राशि से अनंतगुणा कर्मरूप पुद्गलद्रव्य जानना ॥ 191 ॥

समयप्रबद्ध

स्वरूप	5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, शीत-उष्ण, स्निग्ध-रुक्ष से परिणत
प्रमाण	$\frac{\text{सिद्ध राशि}}{\text{अनंत}}$ अथवा अभव्य राशि × अनंत
परिभाषा	समय-समय प्रति बध्यते इति समयप्रबद्धं । जो प्रत्येक समय जीव के साथ बंधता है, उसे समयप्रबद्ध कहते हैं ।

आउगभागो थोवो, णामागोदे समो तदो अहियो ।
घादितिये वि य तत्तो, मोहे तत्तो तदो तदिये ॥ 192 ॥

≈अर्थ— सब मूल प्रकृतियों में आयुकर्म का हिस्सा थोड़ा है ।

≈नाम और गोत्र कर्म का हिस्सा आपस में समान है, तो भी आयुकर्म के भाग से अधिक है ।

≈अन्तराय-दर्शनावरण-ज्ञानावरण इन तीन घातिया कर्मों का भाग आपस में समान है, तो भी नाम-गोत्र के भाग से अधिक है ।

≈इससे अधिक मोहनीय कर्म का भाग है तथा

≈मोहनीय से भी अधिक वेदनीय कर्म का भाग है ॥ 192 ॥

1 समयप्रबद्ध में से कर्मों का बँटवारा

कर्म	द्रव्यप्रमाण
आयु	स्तोक
नाम, गोत्र	परस्पर समान, पूर्व से अधिक
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय	परस्पर समान, पूर्व से अधिक
मोहनीय	पूर्व से अधिक
वेदनीय	पूर्व से अधिक

जहाँ जितने कर्मों का बंध होता है,
वहाँ उतने कर्मों में बँटवारा होता है।

गुणस्थान	बध्यमान मूलकर्म
1, 2, 4, 5, 6, 7	7 कर्म, 8 कर्म
3	7 कर्म (आयु को छोड़कर)
8, 9	7 कर्म (आयु को छोड़कर)
10	6 कर्म (आयु, मोहनीय को छोड़कर)
11, 12, 13	1 कर्म (वेदनीय)

सुहदुक्खणिमित्तादो, बहुणिज्जरगोत्ति वेयणीयस्स ।
सव्वेहिंतो बहुगं, दव्वं होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥ 193 ॥

≈अर्थ— वेदनीय कर्म सुख-दुःख में निमित्त होता है, इसलिये इसकी निर्जरा भी बहुत होती है ।

≈इसीलिए सब कर्मों से अधिक द्रव्य इस वेदनीय कर्म का होता है; ऐसा परमागम में कहा है ॥ 193 ॥

सेसाणं पयडीणं, ठिदिपडिभागेण होदि दव्वं तु ।
आवलिअसंखभागो, पडिभागो होदि णियमेण ॥ 194 ॥

≈ अर्थ— वेदनीय के सिवाय बाकी सब मूल प्रकृतियों के द्रव्य का स्थिति के अनुसार बँटवारा होता है । जिसकी स्थिति अधिक है उसका अधिक, कम को कम, तथा समान स्थिति वाले को समान द्रव्य हिस्से में आता है, ऐसा जानना ।

≈इनके विभाग करने में प्रतिभागहार नियम से आवलि के असंख्यातवें भाग प्रमाण समझना ॥ 194 ॥

विभाग का कारण

वेदनीय कर्म सुख-दु:ख का कारण है । अत: इसकी निर्जरा बहुत होती है । इसलिए इसका द्रव्य सबसे अधिक प्राप्त होता है ।

शेष कर्मों का अपने स्थिति के अनुसार विभाग होता है ।

जिसकी स्थिति अल्प, उसे द्रव्य अल्प ।

जिसकी स्थिति अधिक, उसे द्रव्य अधिक ।

अधिक का प्रमाण लाने के लिए प्रतिभाग का प्रमाण = $\frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}}$

बहुभागे समभागो, अट्ठण्हं होदि एक्कभागम्हि ।
उत्तकमो तत्थवि बहुभागो बहुगस्स देयो दु ॥ 195 ॥

≈अर्थ— बहुभाग का समान भाग करके आठ प्रकृतियों को देना और

≈बचे हुए एक भाग में पहले कहे हुए क्रम से आवली के असंख्यातवें भाग का भाग देते जाना ।

≈उसमें भी जो बहुत द्रव्य वाला हो उसको बहुभाग देना ।

≈ऐसा अंत तक प्रतिभाग करते जाना ॥ 195 ॥

विभाग का विधान

समयप्रबद्ध = 75000

$\frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}} = 5$

$\frac{\text{समयप्रबद्ध}}{\text{प्रतिभाग}}$ = एकभाग	$\frac{75000}{5} = 15000$
शेष द्रव्य = बहुभाग	60000
समभाग = $\frac{\text{बहुभाग}}{\text{बध्यमान कर्म}}$	$\frac{60000}{8} = 7500$
$\frac{\text{शेष एकभाग}}{\text{प्रतिभाग}}$ = एकभाग	$\frac{15000}{5} = 3000$
शेष भाग = बहुभाग इसे वेदनीय में दिया जाएगा	12000
$\frac{\text{शेष एकभाग}}{\text{प्रतिभाग}}$	$\frac{3000}{5} = 600$
शेष भाग = बहुभाग इसे मोहनीय में दिया जायेगा	2400

विभाग का विधान

समयप्रबद्ध = 75000

$\frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}}$ = 5

$\frac{\text{शेष एकभाग}}{\text{प्रतिभाग}}$	$\frac{600}{5} = 120$
शेषभाग = बहुभाग इसे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय में समानरूप से दिया जायेगा ।	480 $\frac{480}{3} = 160$ प्रत्येक को 160, 160, 160
$\frac{\text{शेष एकभाग}}{\text{प्रतिभाग}}$	$\frac{120}{5} = 24$
शेष भाग = बहुभाग इसे नाम, गोत्र में समानरूप से दिया जायेगा ।	96 $\frac{96}{2} = 48$ प्रत्येक को 48, 48
शेष एक भाग द्रव्य आयु को	24

	वेदनीय	मोहनीय	ज्ञानावरण	दर्शनावरण	अंतराय	नाम	गोत्र	आयु
समभाग	7500	7500	7500	7500	7500	7500	7500	7500
प्रतिभाग	12000	2400	160	160	160	48	48	24
कुल	19500	9900	7660	7660	7660	7548	7548	7524

नोट — यहाँ प्रतिभागरूप द्रव्य अधिक दिखाई दे रहा है, पर वास्तविक गणित में वह बहुत अल्प होता है ।

उत्तरपयडीसु पुणो, मोहावरणा हवंति हीणकमा ।
अहियकमा पुण णामा, विग्घा य ण भंजणं सेसे ॥ 196 ॥

≈अर्थ— उत्तर प्रकृतियों में मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण के भेदों में क्रम से हीन-हीन द्रव्य है और

≈नामकर्म, अंतराय कर्म के भेदों में क्रम से अधिक-अधिक है ।

≈बाकी बचे वेदनीय, गोत्र, आयु कर्म – इन तीनों के भेदों में बँटवारा नहीं होता क्योंकि इनकी एक-एक ही प्रकृति एक काल में बंधती है ॥ 196 ॥

उत्तर प्रकृतियों में विभाग का क्रम

प्रकृति	क्रम
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय	हीन-हीन द्रव्य
नाम, अंतराय	अधिक-अधिक द्रव्य
वेदनीय, आयु, गोत्र	बँटवारा नहीं क्योंकि एक काल में 1 ही उत्तर प्रकृति का बंध होता है ।

मतिज्ञानावरण > श्रुतज्ञानावरण > अवधिज्ञानावरण > मन:पर्यय ज्ञानावरण > केवलज्ञानावरण

सव्वावरणं दव्वं, अणंतभागो दु मूलपयडीणं ।
सेसा अणंतभागा, देसावरणं हवे दव्वं ॥ 197 ॥

≈अर्थ— ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय – इन तीन मूल प्रकृतियों के अपने-अपने द्रव्य में यथायोग्य अनंत का भाग देने से एक भाग सर्वघाती का द्रव्य होता है और

≈बाकी अनंत बहुभाग प्रमाण द्रव्य देशघाती प्रकृतियों का कहा है ॥ 197 ॥

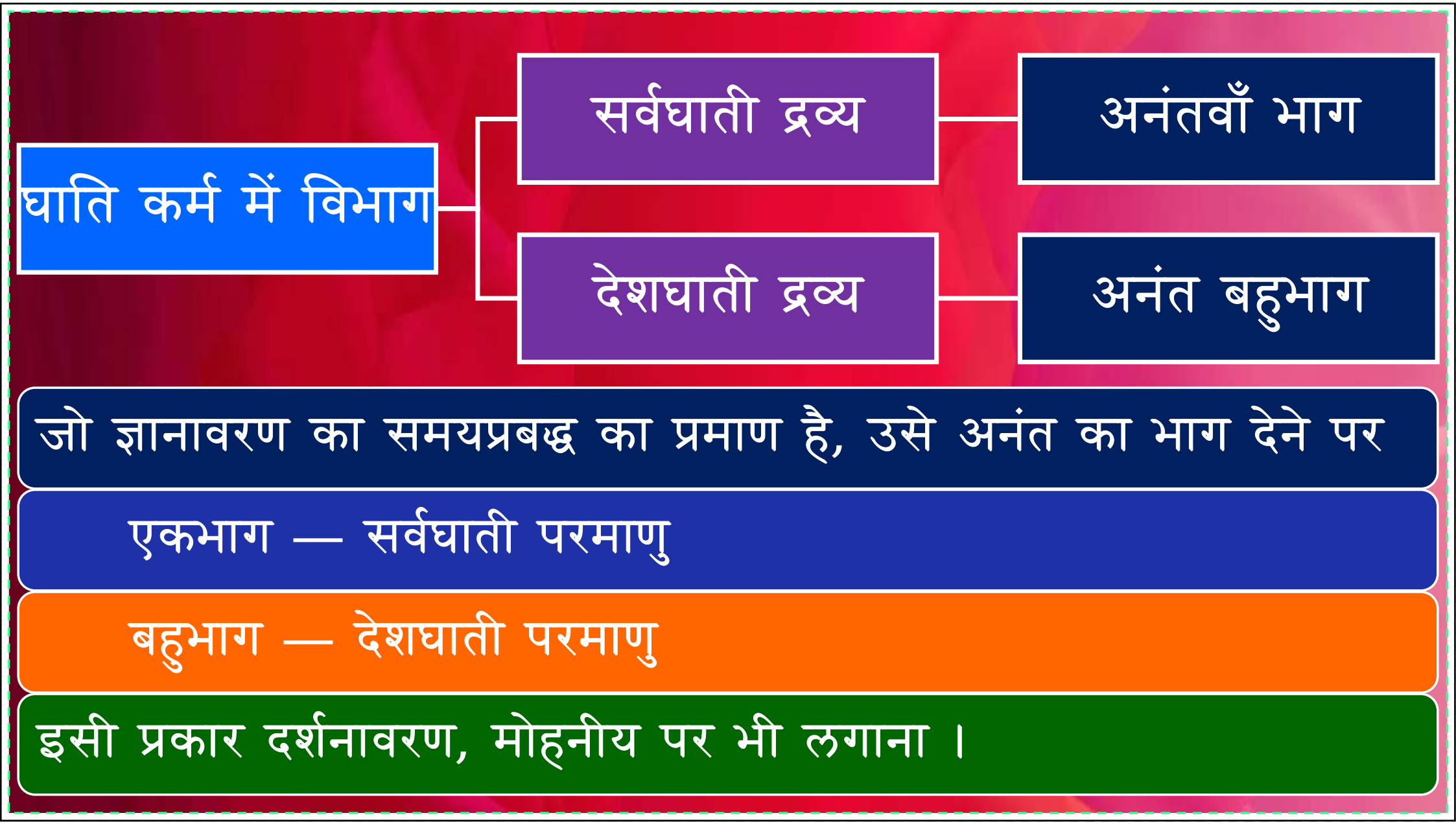

घाति कर्म में विभाग

- सर्वघाती द्रव्य — अनंतवाँ भाग
- देशघाती द्रव्य — अनंत बहुभाग

जो ज्ञानावरण का समयप्रबद्ध का प्रमाण है, उसे अनंत का भाग देने पर

एकभाग — सर्वघाती परमाणु

बहुभाग — देशघाती परमाणु

इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय पर भी लगाना ।

देशघाती प्रकृतियों में देशघाती और सर्वघाती दोनों प्रकार के स्पर्धक हैं ।

अतः देशघाती प्रकृतियों को दोनों में से द्रव्य प्राप्त होगा ।

सर्वघाती प्रकृतियों को मात्र सर्वघाती में से ही द्रव्य मिलेगा ।

देसावरणण्णोण्णब्भत्थं तु अणंतसंखमेत्तं खु ।
सव्वावरणधणट्ठं, पडिभागो होदि घादीणं ॥ 198 ॥

≈अर्थ— चार ज्ञानावरणादि देशघाती प्रकृतियों की अन्योन्याभ्यस्तराशि अनंत संख्या प्रमाण है ।

≈वही राशि सर्वघाती प्रकृतियों के द्रव्य प्रमाण को निकालने के लिये घातिया कर्मों का प्रतिभाग जानना ॥ 198 ॥

प्रतिभाग का प्रमाण

सर्वघाती और देशघाती द्रव्य में अनुभाग की अपेक्षा अनंत गुणहानियाँ होती हैं ।

सर्वघाती द्रव्य की गुणहानियाँ अनंत हैं, जो शैल से दारु के अनंत बहुभाग तक हैं ।

देशघाती द्रव्य की गुणहानियाँ अनंत हैं, जो दारु के अनंतवें भाग से लता तक हैं ।

देशघाती द्रव्य की गुणहानियों की अन्योन्याभ्यस्त राशि ही प्रतिभाग का प्रमाण है ।

ज्ञानावरण का सर्वघाती द्रव्य = $\frac{\text{सर्व ज्ञानावरण द्रव्य}}{\text{देशघाती की अन्योन्याभ्यस्त राशि}}$

अन्योन्याभ्यस्त राशि = $2^{\text{नाना गुणहानि}}$

≈उदाहरण में सर्वद्रव्य = 6300, देशघाती की गुणहानि = 2, सर्वघाती की गुणहानि = 4 ।

≈सर्व सर्वघाती का द्रव्य = 100 + 200 + 400 + 800 = 1500

≈यह पूरा निकालने हेतु = $\frac{\text{सर्वद्रव्य}}{\text{देशघाती की अन्योन्याभ्यस्त}}$

≈= $\frac{6300}{2^2}$ = $\frac{6300}{4}$ = लगभग 1500

सव्वावरणं दव्वं, विभज्जणिज्जं तु उभयपयडीसु ।
देसावरणं दव्वं, देसावरणेसु णेविदरे ॥ 199 ॥

≈अर्थ— सर्वघाती द्रव्य का सर्वघाती, देशघाती दोनों प्रकृतियों में विभाग करके देना और

≈देशघाती द्रव्य का विभाग देशघाती में ही देना, केवलज्ञानावरणादि सर्वघातिया प्रकृतियों में नहीं देना ॥ 199 ॥

सर्वघाती प्रकृतियों में देशघाती स्पर्धक पाये ही नहीं जाते, इसलिए उनमें देशघाती में से द्रव्य नहीं मिलता है ।

देशघाती प्रकृतियों में दोनों प्रकार के स्पर्धक हैं । इसलिए उनमें दोनों द्रव्यों में से द्रव्य मिलता है ।

बहुभागे समभागो, बंधाणं होदि एक्कभागम्हि ।
उत्तकमो तत्थवि बहुभागो बहुगस्स देओ दु ॥ 200 ॥

≈अर्थ— जिनका एक समय में बंध हो उन प्रकृतियों में अपने-अपने पिंड-द्रव्य को आवली के असंख्यातवें भाग का भाग देकर पूर्वोक्त रीति से बहुभाग का तो बराबर बाँटकर अपनी-अपनी उत्तर प्रकृतियों में समान द्रव्य देना और शेष एक भाग में भी पूर्व कहे क्रम से ही भाग कर-करके बहुभाग बहुत द्रव्य वाले को देना ॥ 200 ॥

उत्तर प्रकृतियों में द्रव्य के विभाग का प्रकार मूल प्रकृतिवत् ही है । अर्थात् एक भाग अलग रखकर बहुभाग के समान हिस्से करना ।

शेष एक भाग को पुनः एकभाग-बहुभाग करके बाँटते जाना ।

इतना विशेष है कि बध्यमान प्रकृतियों में ही द्रव्य देना है ।

जिसका विभाग बहुत है उसे द्रव्य अधिक देना ।

घादितियाणं सगसग-सव्वावरणीयसव्वदव्वं तु ।
उत्तकमेण य देयं, विवरीयं णामविग्घाणं ॥ 201 ॥

≈अर्थ— ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय – इन 3 घातिया कर्मों का क्रम से प्रथम प्रकृति से अंत की प्रकृति पर्यंत अपना-अपना सर्वघाती द्रव्य घटता-घटता देना । और

≈नाम तथा अंतराय की प्रकृतियों का द्रव्य विपरीत अर्थात् प्रथम प्रकृति से अंत की प्रकृति पर्यंत बढ़ता-बढ़ता अथवा अंत से लेकर आदि प्रकृति पर्यन्त घटता-घटता देना ॥ 201 ॥

उत्तर प्रकृतियों में किसका विभाग अधिक है?

ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय

आदि प्रकृति से अंत प्रकृति तक

हीन-हीन क्रम

नाम, गोत्र

आदि प्रकृति से अंत प्रकृति तक

अधिक-अधिक क्रम

मतिज्ञानावरण में सर्वघाती का द्रव्य

सर्वघाती द्रव्य = कुल द्रव्य का अनंतवाँ भाग

$\frac{\text{सर्वघाती द्रव्य}}{\text{प्रतिभाग}}$ = एकभाग

शेष बहुभाग के समान 5 भाग करें और ज्ञानावरण की प्रत्येक प्रकृति में दें ।

शेष एकभाग को एकभाग, बहुभाग करते हुए क्रम-क्रम से बहुभाग मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मन:पर्ययज्ञानावरण को देना । अंतिम एकभाग केवलज्ञानावरण को देना ।

इस प्रकार सर्वघाती का द्रव्य मतिज्ञानावरण को मिलता है ।

मतिज्ञानावरण में देशघाती का द्रव्य

देशघाती द्रव्य = कुल द्रव्य का अनंत बहुभाग

$$\frac{\text{देशघाती द्रव्य}}{\text{प्रतिभाग}} = \text{एकभाग}$$

शेष बहुभाग के समान 4 विभाग करें और ज्ञानावरण की प्रत्येक देशघाती प्रकृति में दें ।

शेष एकभाग को पुनः एकभाग, बहुभाग करते हुए बहुभाग क्रमशः मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण में दें । अंतिम एक भाग मनःपर्यय ज्ञानावरण को दें ।

उदाहरण

माना कि ज्ञानावरण का समयप्रबद्ध = 200000,

$\frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}} = 5$

अनंत = 8

≈सर्वघाती द्रव्य = $\frac{200000}{8} = 25000$

≈देशघाती द्रव्य = $\frac{200000}{8} \times (8 - 1) =$ 1,75,000

≈सर्वघाती द्रव्य का विभाग = $\frac{25000}{5} = 5000$ एकभाग

≈$\frac{\text{शेष बहुभाग}}{5} = \frac{20000}{5} = 4000$ (प्रत्येक प्रकृति में देय)

उदाहरण

माना कि ज्ञानावरण का समयप्रबद्ध = 200000,

$\frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}} = 5$

अनंत = 8

$\approx \frac{5000}{5} = 1000,$ बहुभाग = 4000 मतिज्ञानावरण में

$\approx \frac{1000}{5} = 200,$ बहुभाग 800 श्रुतज्ञानावरण में

$\approx \frac{200}{5} = 40,$ बहुभाग 160 अवधिज्ञानावरण में

$\approx \frac{40}{5} = 8,$ बहुभाग 32 मन:पर्ययज्ञानावरण में

≈शेष एक भाग 8 केवलज्ञानावरण में

	मतिज्ञानावरण	श्रुतज्ञानावरण	अवधिज्ञानावरण	मन:पर्ययज्ञानावरण	केवलज्ञानावरण
समभाग	4000	4000	4000	4000	4000
प्रतिभाग	4000	800	160	32	8
कुल	8000	4800	4160	4032	4008

इसी प्रकार देशघाती द्रव्य बाँटिए । परन्तु अब मात्र 4 प्रकृतियों में द्रव्य देना है ।

	मतिज्ञानावरण	श्रुतज्ञानावरण	अवधिज्ञानावरण	मन:पर्ययज्ञानावरण
समभाग	35000	35000	35000	35000
प्रतिभाग	28000	5600	1120	280
कुल	63000	40600	36120	35280

इस प्रकार मतिज्ञानावरण का कुल द्रव्य 8000 + 63000 = 71000 हुआ ।

दर्शनावरण कर्म में विभाग

सर्वघाती द्रव्य 9 प्रकृतियों में दिया जायेगा ।

देशघाती द्रव्य 3 प्रकृतियों में दिया जायेगा ।

प्रकृतियों का क्रम है —

स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, निद्रा, प्रचला, चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, केवलदर्शनावरण ।

अंतराय कर्म में विभाग

इसी प्रकार अंतराय में जानना ।

प्रकृतियों का क्रम है — वीर्यान्तराय, परिभोगान्तराय, भोगान्तराय, लाभान्तराय, दानान्तराय

एक-एक प्रकृति के कुल द्रव्य का अनंतवाँ भाग सर्वघाती होता है और अनंत बहुभाग द्रव्य देशघाती होता है ।

मोहे मिच्छत्तादी, सत्तरसण्हं तु दिज्जदे हीणं ।
संजलणाणं भागेव, होदि पणणोकसायाणं ॥ 202 ॥

≈अर्थ— मोहनीय कर्म में मिथ्यात्वादिक (मिथ्यात्व और चारों तरह का लोभ, माया, क्रोध, मान) सत्रह प्रकृतियों को क्रम से हीन-हीन द्रव्य देना और

≈पाँच नोकषाय का भाग संज्वलन कषाय के भाग के समान जानना ॥ 202 ॥

मोहनीय में द्रव्य का विभाग

सर्वघाती द्रव्य को 16 कषाय, मिथ्यात्व और 5 नोकषाय में दिया जायेगा

देने का क्रम —

मिथ्यात्व → अनंतानु-बंधी — लोभ, माया, क्रोध, मान → संज्वलन — लोभ, माया, क्रोध, मान → प्रत्या-ख्यान — लोभ, माया, क्रोध, मान → अप्रत्या-ख्यान — लोभ, माया, क्रोध, मान → वेद, रति-अरति, हास्य-शोक, भय, जुगुप्सा

नोकषायों में बँटवारा

चूंकि सारी नोकषाय एक साथ नहीं बंधती, अतः बध्यमान में बँटवारा होगा ।

3 वेद में से	1
रति, अरति में से	1
हास्य, शोक में से	1
भय-जुगुप्सा — ध्रुव बंधी	2
कुल	5

एकसाथ 5 से अधिक नोकषाय का बंध नहीं होता ।

संजलणभागबहुभागद्धं अकसायसंगयं दव्वं ।
इगिभागसहियबहुभागद्धं संजलणपडीबद्धं ॥ 203 ॥

≈अर्थ— मोहनीय कर्म के सम्पूर्ण द्रव्य का प्रमाण पहले बता चुके हैं । उसमें अनन्तवा भाग सर्वघाती और बहुभाग देशघाती का है ।

≈देशघाती के द्रव्य में आवली के असंख्यातवें भाग का भाग देना और एक भाग को जुदा रखना ।

≈बहुभाग का आधा नोकषाय का द्रव्य जानना । और

≈शेष एक भाग सहित आधा बहुभाग संज्वलन कषाय का देशघाती संबंधी द्रव्य होता है ॥ 203 ॥

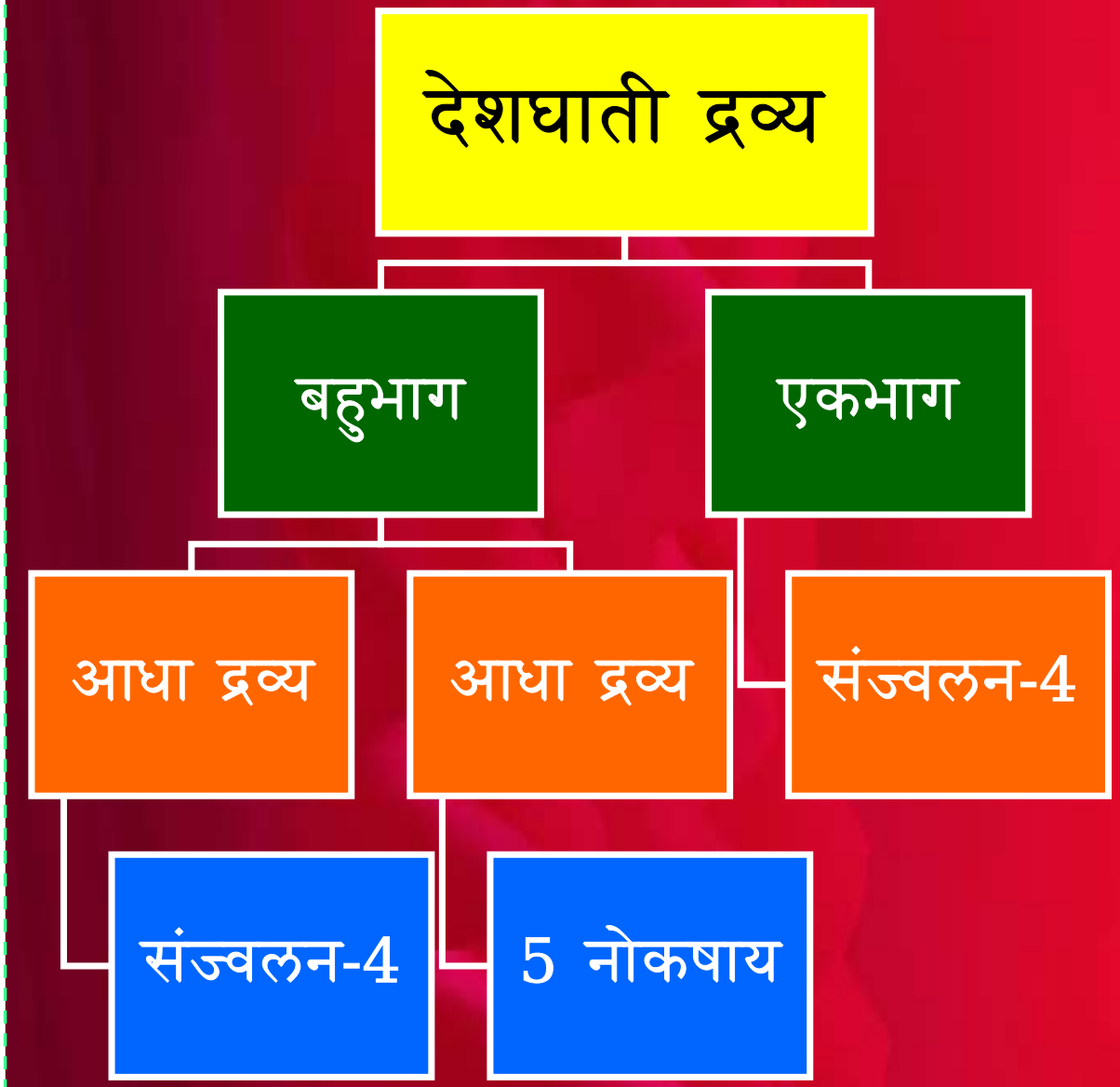

इस तरह संज्वलन का द्रव्य देशघाती द्रव्य के आधे से कुछ अधिक है तथा 5 नोकषाय का द्रव्य देशघाती द्रव्य के आधे से कुछ कम है ।

इसे पुनः बहुभाग, एकभाग आदि क्रम से बाँटना चाहिए ।

नोकषाय में द्रव्य देने का क्रम —
वेद, रति-अरति, हास्य-शोक, भय, जुगुप्सा

तण्णोकसायभागो, सबंधपणणोकसायपयडीसु ।
हीणकमो होदि तहा, देसे देसावरणदव्वं ॥ 204 ॥

≈अर्थ— वह नोकषाय के हिस्सा में आया हुआ द्रव्य एकसाथ बंधने वाली पाँच नोकषाय प्रकृतियों में क्रम से हीन-हीन देना । और

≈इसी प्रकार देशघाती संज्वलन कषाय का देशघाती संबंधी जो द्रव्य है वह युगपत् जितनी प्रकृति बँधे उनको पहले कहे हीन क्रम से देना ॥ 204 ॥

जहाँ जितनी प्रकृतियों का बंध होता है, वहाँ उतनी में ही विभाग करना ।

जैसे 9वें गुणस्थान के सवेद भाग में नोकषाय में से मात्र पुरुषवेद का ही बंध होता है । तो नोकषाय संबंधी सारा द्रव्य पुरुषवेद को मिलेगा ।

9वें गुणस्थान के दूसरे भाग में संज्वलन का ही बंध होता है, तो नोकषायों का कोई विभाग नहीं होता ।

इसी प्रकार अन्य कर्मों में भी जानना चाहिए ।

पुंबंधऽद्धा अंतोमुहुत्त इत्थिम्हि हस्सजुगले य ।
अरदिदुगे संखगुणा, णउंसगद्धा विसेसहिया ॥ 205 ॥

≈अर्थ— पुरुषवेद के निरंतर बंध होने का काल अंतर्मुहूर्त है । यह अंतर्मुहूर्त सबसे छोटा समझना ।

≈स्त्रीवेद का उससे संख्यात गुणा,

≈हास्य और रति का काल उससे भी संख्यात गुणा,

≈अरति और शोक का उससे भी संख्यात गुणा; किंतु अन्तर्मुहूर्त ही है और

≈नपुंसकवेद का काल उससे भी कुछ अधिक जानना ॥ 205 ॥

निरन्तर बंधकाल

प्रकृति	काल	गुणकार
पुरुषवेद	अंतर्मुहूर्त × 2	स्तोक
स्त्रीवेद	अंतर्मुहूर्त × 4	संख्यात गुणा
हास्य-रति	अंतर्मुहूर्त × 16	संख्यात गुणा
अरति-शोक	अंतर्मुहूर्त × 32	संख्यात गुणा
नपुंसक वेद	अंतर्मुहूर्त × 42	विशेष अधिक

जिसका जितना बंध काल है, उसके अनुसार उसका सत्त्व द्रव्य है ।

अधिक बंधकाल, अधिक सत्त्व परमाणु। अल्प बंधकाल, अल्प सत्त्व परमाणु

पणविग्घे विवरीयं, सबंधपिंडिदरणामठाणे वि ।
पिंडं दव्वं च पुणो, सबंधसगपिंडपयडीसु ॥ 206 ॥

≈अर्थ— दानान्तराय आदिक पाँच प्रकृतियों में उलटा, अर्थात् अंत से लेकर आदि तक क्रम जानना ।

≈नामकर्म के स्थानों में जो एक ही काल में बंध को प्राप्त होने वाली गत्यादि पिंडरूप और अगुरुलघु आदि अपिंडरूप प्रकृतियाँ हैं उनमें भी उलटा ही क्रम जानना ।

≈इस प्रकार प्रदेश बंध का विधान कहा ॥ 206 ॥

वीर्यान्तराय
लाभांतराय
दानांतराय
उपभोगान्तराय
भोगान्तराय
अंतराय कर्म में अधिक बहुभाग से एकभाग तक देने का क्रम

नामकर्म का देयक्रम (अधिक से हीन)

≈1. तीर्थंकर
≈2. निर्माण
≈3. यश-अयश
≈4. आदेय-अनादेय
≈5. सुस्वर-दुःस्वर
≈6. सुभग-दुर्भग
≈7. शुभ-अशुभ
≈8. स्थिर-अस्थिर
≈9. प्रत्येक-साधारण
≈10. पर्याप्त-अपर्याप्त
≈11. बादर-सूक्ष्म
≈12. त्रस-स्थावर
≈13. विहायोगति
≈14. उद्योत
≈15. आतप
≈16. उच्छ्वास
≈17. परघात
≈18. उपघात
≈19. अगुरुलघु
≈20. आनुपूर्वी
≈21. स्पर्श
≈22. रस
≈23. गंध
≈24. वर्ण
≈25. संहनन
≈26. अंगोपांग
≈27. संस्थान
≈28. शरीर
≈29. जाति
≈30. गति

जहाँ जितनी प्रकृतियों का बंध होता है, वहाँ-वहाँ ही उनका विभाग करना ।

पिण्ड प्रकृतियों में शरीर ही ऐसी प्रकृति है जिसमें युगपत् अनेक शरीरों का बंध होता है ।

इन सबका 1 पिण्ड मानकर जो शरीर नामकर्म का विभाग प्राप्त होगा, उसका पुनः बध्यमान शरीरों में बँटवारा प्रतिभाग के अनुसार होगा ।

छण्हंपि अणुक्कस्सो, पदेसबंधो दु चदुवियप्पो दु ।
सेसतिये दुवियप्पो, मोहाऊणं च दुवियप्पो ॥ 207 ॥

≈अर्थ— ज्ञानावरणादि छह कर्मों का अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध सादि आदि के भेद से चार तरह का है, बाकी उत्कृष्टादि तीन बंध सादि अध्रुव के भेद से दो तरह के हैं ।

≈मोहनीय तथा आयुकर्म के उत्कृष्टादि चारों ही भेद सादि आदि दो तरह के हैं ॥ 207 ॥

मूल प्रकृतियों का उत्कृष्ट आदि प्रदेशबंध

	जघन्य	अजघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, नाम, गोत्र, अन्तराय	2	2	2	4
मोहनीय, आयु	2	2	2	2

तीसण्हमणुक्कस्सो, उत्तरपयडीसु चउविहो बंधो ।
सेसतिये दुवियप्पो, सेसचउक्केवि दुवियप्पो ॥ 208 ॥

≈अर्थ— उत्तर प्रकृतियों में तीस प्रकृतियों का अनुकृष्टबंध सादि आदिक चार प्रकार का है । शेष उत्कृष्टादि तीन के सादि अध्रुव ये दो ही भेद हैं ।

≈शेष बची 90 प्रकृतियों का उत्कृष्टादि चारों तरह का बंध सादि और अध्रुव प्रकार का है ॥ 208 ॥

उत्तर प्रकृतियों का उत्कृष्ट आदि प्रदेशबंध

	जघन्य	अजघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
30 प्रकृति	2	2	2	4
90 प्रकृति	2	2	2	2

णाणंतरायदसयं, दंसणछक्कं च मोहचोद्दसयं ।
तीसण्हमणुक्कस्सो, पदेसबंधो चदुवियप्पो ॥ 209 ॥

≈अर्थ— ज्ञानावरण और अंतराय की 10,

≈दर्शनावरण की 6,

≈मोहनीय की अप्रत्याख्यानादि (अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलन कषाय और भय, जुगुप्सा) 14,

≈सब मिलकर 30 प्रकृतियों का अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध चार प्रकार का है ॥ 209 ॥

30 प्रकृतियाँ जिनका अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध 4 प्रकार का है

ज्ञानावरण - 5	अन्तराय - 5	दर्शनावरण - 4	निद्रा, प्रचला - 2
अप्रत्याख्यान - 4	प्रत्याख्यान - 4	संज्वलन - 4	भय-जुगुप्सा

उक्कडजोगो सण्णी, पज्जत्तो पयडिबंधमप्पदरो ।
कुणदि पदेसुक्कस्सं, जहण्णये जाण विवरीयं ॥ 210 ॥

≈अर्थ— जो जीव उत्कृष्ट योगों से सहित, संज्ञी, पर्याप्त और थोड़ी प्रकृतियों का बंध करने वाला होता है, वही जीव उत्कृष्ट प्रदेशबंध को करता है । तथा

≈जघन्य प्रदेशबंध में इससे उलटा जानना ॥ 210 ॥

उत्कृष्ट प्रदेशबंध की सामग्री

1) उत्कृष्ट योग	• जब उत्कृष्ट योग होता है, तब बड़ा समयप्रबद्ध बंधता है । फलत: प्रदेशबंध बढ़ता है ।
2) संज्ञी	• संज्ञी जीवों के ही उत्कृष्ट प्रदेशबंध संभव है क्योंकि उन्हीं के उत्कृष्ट योग संभव है ।
3) पर्याप्त	• पर्याप्त जीव के ही उत्कृष्ट प्रदेशबंध संभव है ।
4) अल्प प्रकृति बंध	• जब अल्प प्रकृतियाँ बंधेगी, तब विभाग कम प्रकृतियों में होगा । तब उस प्रकृति का प्रदेशबंध अधिक पाया जायेगा ।

जघन्य प्रदेशबंध के लिए इससे विपरीत सामग्री चाहिए
1)
जघन्य योग
2)
असंज्ञी
अपर्याप्त
3)
अधिक प्रकृतियों का बंध
4)

आउक्कस्सपदेसं, छक्कं मोहस्स णव दु ठाणाणि ।
सेसाणं तणुकसाओ, बंधदि उक्कस्सजोगेण ॥ 211 ॥

≈अर्थ— आयुकर्म का उत्कृष्ट प्रदेशबंध छः गुणस्थानों में रहने वाला करता है ।

≈मोहनीय का उत्कृष्ट प्रदेशबंध प्रथम से नवमे गुणस्थानवर्ती जीव करता है । और

≈शेष बचे ज्ञानावरणादि छह कर्मों का उत्कृष्ट प्रदेशबंध उत्कृष्ट योग को धारण करने वाला सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान वाला जीव करता है ।

≈यहाँ सब जगह उत्कृष्ट योग द्वारा ही बंध जानना ॥ 211 ॥

उत्कृष्ट प्रदेशबंध का स्वामी

मूल कर्म	स्वामी (गुणस्थान)
आयु कर्म	1, 2, 4, 5, 6, 7 क्योंकि इन सभी गुणस्थानों में आवश्यक सामग्री उपलब्ध है ।
मोहनीय कर्म	मिथ्यात्व से अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती क्योंकि इन सभी गुणस्थानों में आवश्यक सामग्री उपलब्ध है । जब 7 कर्मों का बंध करता है तब अन्य आवश्यक सामग्री के साथ मोहनीय का उत्कृष्ट बंध होता है ।
शेष 6 कर्म	सूक्ष्म सांपरायवर्ती क्योंकि यहाँ 6 प्रकृतियों का ही बंध होता है । जिससे प्रत्येक मूल प्रकृति को अन्यत्र से यहाँ द्रव्य अधिक मिलता है ।

नोट— इन स्थानों पर सभी को उत्कृष्ट प्रदेशबंध होता ही है — ऐसा नहीं है ।
जब इन स्थानों पर उत्कृष्ट योग से परिणमित होता है, तब उत्कृष्ट प्रदेशबंध होता है ।

सत्तर सुहुमसरागे, पंचऽणियट्टिम्हि देसगे तदियं ।
अयदे विदियकसायं, होदि हु उक्कस्सदव्वं तु ॥ 212 ॥

≈अर्थ— मतिज्ञानावरणादि 5, दर्शनावरण 4, अंतराय 5, यशस्कीर्ति, उच्च गोत्र और सातावेदनीय – इन 17 प्रकृतियों का सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान में उत्कृष्ट प्रदेशबंध होता है ।

≈पुरुष-वेदादि पाँच का नवमें गुणस्थान में, प्रत्याख्यान-4 का देशविरत नामा पाँचवें गुणस्थान में, अप्रत्याख्यान-4 कषायों का चौथे असंयत गुणस्थान में उत्कृष्ट प्रदेशबंध होता है ॥ 212 ॥

उत्तर प्रकृतियों के उत्कृष्ट प्रदेशबंध के स्वामी

प्रकृतियाँ	स्वामी
सूक्ष्मसांपराय में बध्यमान 17 प्रकृतियाँ	सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती क्योंकि यहाँ सबसे कम प्रकृतियों का बंध है अतः एक-एक को अधिक विभाग मिलेगा ।
4 संज्वलन, 1 पुरुषवेद	अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती क्योंकि यहाँ मोहनीय की सबसे कम प्रकृतियों का बंध है अतः प्रत्येक को द्रव्य अधिक मिलेगा ।
4 प्रत्याख्यानावरण	देशसंयत गुणस्थानवर्ती क्योंकि यहाँ 16 कषायों की बजाय 8 कषायों में ही द्रव्य विभाजित होता है ।
4 अप्रत्याख्यानावरण	अविरत सम्यग्दृष्टि क्योंकि यहाँ 16 कषायों की बजाय 12 कषायों में ही द्रव्य विभाजित होता है ।

छण्णोकसायणिद्दा-पयलातित्थं च सम्मगो य जदी ।
सम्मो वामो तेरं, णरसुरआऊ असादं तु ॥ 213 ॥
देवचउक्कं वज्जं, समचउरं सत्थगमणसुभगतियं ।
आहारमप्पमत्तो, सेसपदेसुक्कडो मिच्छो ॥ 214 ॥ विसेसयं ।

≈अर्थ— छः नोकषाय, निद्रा, प्रचला, और तीर्थंकर – इन नौ का उत्कृष्ट प्रदेशबंध सम्यग्दृष्टि करता है । तथा

≈मनुष्यायु, देवायु, असाता वेदनीय, देवचतुष्क, वज्रऋषभनाराच संहनन, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्तविहायोगति, सुभगादि तीन – इन तेरह प्रकृतियों का उत्कृष्ट प्रदेशबंध सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि दोनों ही करते हैं । और

≈आहारकद्विक का उत्कृष्ट प्रदेशबंध अप्रमत्त गुणस्थान वाला करता है ।

≈इन 54 के बिना अवशेष 66 प्रकृतियों का उत्कृष्ट प्रदेशबंध मिथ्यादृष्टि जीव उत्कृष्ट योगों से करता है ॥ 213 ॥ 214 ॥

उत्तर प्रकृतियों के उत्कृष्ट प्रदेशबंध के स्वामी

प्रकृतियाँ	स्वामी
6 नोकषाय, तीर्थंकर	सम्यग्दृष्टि
निद्रा, प्रचला	सम्यग्दृष्टि क्योंकि 9वें भाग के स्थान पर 6ठा भाग मिलता है ।
मनुष्यायु, देवायु, असाता वेदनीय, देव-4, वज्रऋषभनाराच, समचतुरस्र, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय	सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि
आहारक-2	अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती क्योंकि यहाँ ही इसका बंध है ।
शेष 66 प्रकृतियाँ	मिथ्यादृष्टि

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स पढमे जहण्णए जोगे ।
सत्तण्हं तु जहण्णं, आउगबंधेवि आउस्स ॥ 215 ॥

≈अर्थ—सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के अपने पर्याय के पहले समय में जघन्य योगों से आयु के सिवाय सात मूल प्रकृतियों का जघन्य प्रदेशबंध होता है ।

≈आयु का बंध होने पर उसी जीव के आयु का भी जघन्य प्रदेशबंध होता है ॥ 215 ॥

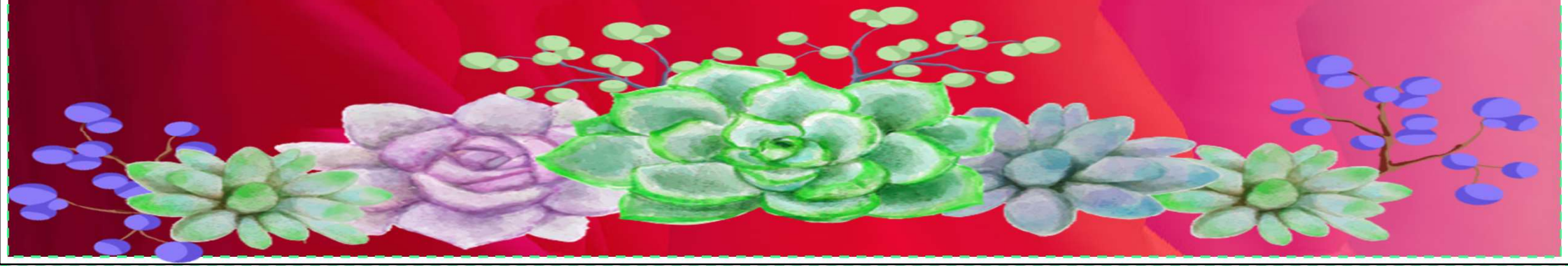

जघन्य प्रदेश बंध

सबसे जघन्य योग सूक्ष्म निगोदिया लब्धि-अपर्याप्त के पर्याय धारण करने के प्रथम समय में होता है । (उपपाद योग के समय)

अत: यहाँ बध्यमान प्रकृतियों का जघन्य बंध यहीं होता है ।

भव के प्रथम समय में 7 कर्मों का बंध होता है, आयु का नहीं । अत: यहाँ 7 कर्मों का जघन्य बंध जानना ।

जब सूक्ष्म निगोदिया लब्धि-अपर्याप्त जीव आयु बांधता है, जघन्य योग सहित होता है, तब आयु का जघन्य प्रदेश बंध होता है ।

नोट- यदि जघन्य योग से परिणमेगा, तभी जघन्य बंध होगा । प्रथम समय में संभव उपपाद योग असंख्यात प्रकार का है । उनमें से जघन्य योग होने पर ही उपर्युक्त अवस्था में जघन्य बंध होता है।

घोडणजोगोऽसण्णी, णिरयदुसुरणिरय आउगजहण्णं ।
अपमत्तो आहारं, अयदो तित्थं च देवचऊ ॥ 216 ॥

≈अर्थ—घोटमान योगों का धारी असैनी जीव नरकद्वय, देवायु तथा नरकायु का जघन्य प्रदेशबंध करता हैं । और

≈आहारकद्वय का अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती तथा

≈चौथे असंयत गुणस्थान वाला तीर्थंकर प्रकृति और देव-चतुष्क इस तरह पाँच प्रकृतियों का जघन्य प्रदेशबंध करता है ॥ 216 ॥

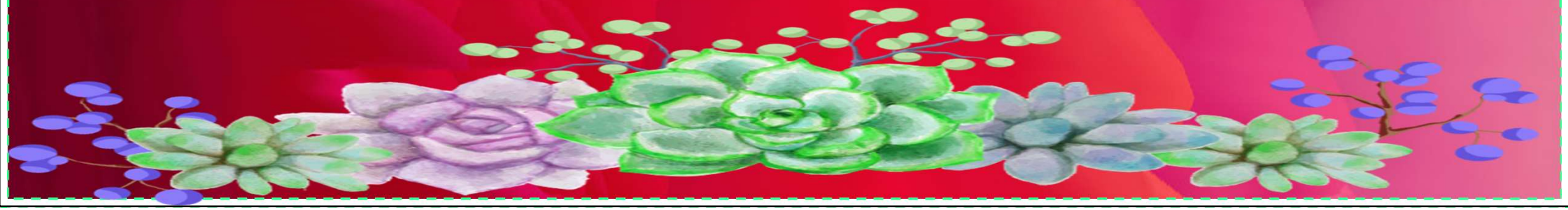

उत्तर प्रकृतियों के जघन्य प्रदेश बंध का स्वामी

प्रकृति	स्वामी
नरक-2, नरकायु, देवायु	परिणाम योगस्थानवर्ती असंज्ञी जीव । क्योंकि असंज्ञी जीव के योग संज्ञी जीव से अल्प होते हैं ।
आहारक-2	अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती क्योंकि यहीं इसका बंध है ।
देव-चतुष्क, तीर्थंकर	भवधारण के प्रथम समय असंयत सम्यग्दृष्टि क्योंकि यहाँ उपपाद योग है

चरिमअपुण्णभवत्थो, तिविग्गहे पढमविग्गहम्मि ठिओ ।
सुहमणिगोदो बंधदि, सेसाणं अवरबंधं तु ॥ 217 ॥

≈अर्थ— छह हजार बारह अपर्याप्त (क्षुद्र) भवों में से अंत के भव में स्थित और

≈विग्रहगति के तीन मोड़ाओं में से पहली वक्रगति में ठहरा हुआ

≈जो सूक्ष्मनिगोदिया जीव है वह पूर्वोक्त 11 से शेष रही 109 प्रकृतियों का जघन्य प्रदेशबंध करता है ॥ 217 ॥

शेष 109 उत्तर प्रकृतियों के जघन्य प्रदेश बंध का स्वामी

जो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि-अपर्याप्त है –

6012 क्षुद्रभवों में से अंतिम भव में स्थित

विग्रहगति के 3 मोड़ों में से प्रथम मोड़े में स्थित

जघन्य योगधारी

अल्पतम प्रकृतियाँ बांधने वाला

ऐसा जीव इन प्रकृतियों का जघन्य प्रदेश बंध करता है । अन्य स्थितियों में मध्यम प्रदेश बंध पाया जायेगा ।